नृत्य कला

भारत में नृत्य कला के विकास का लगभग 2500 वर्षों का इतिहास रहा है। गंधर्व वेद में हमें नृत्य कला का आरम्भिक साक्ष्य मिलता है। परंपरा के अनुसार, भारत के प्रथम नर्तक नटराज शिव हैं। उनसे नृत्य की दो आरम्भिक शैलियाँ विकसित हुईं। प्रथम शैली थी- **तांडव**, जो उग्र तथा संहार से संबंधित नृत्य है। इसमें शिव का आक्रोश व्यक्त होता है। इस नृत्य को सम्पन्न करते हुए शिव के दायें हाथ में डमरू और बायें हाथ में अग्नि होती है। इसी अवस्था में उन्होंने कामदेव को भस्म कर दिया था। वर्तमान में कत्थक शास्त्रीय नृत्य पर हमें शिव के तांडव का प्रभाव दिखता है।

किंतु शिव का एक सौम्य रूप भी है। कई बार एक ही मूर्ति में रौद्र एवं सौम्य रूप, दोनों को दर्शाया जाता है। उनके सौम्य रूप से एक दूसरा नृत्य जुड़ा हुआ है, जिसे **लास्य** नृत्य के नाम से जाना जाता है। वर्तमान में शास्त्रीय नृत्य की जितनी भी शैलियाँ हैं, उन पर तांडव और लास्य दोनों का प्रभाव देखा जा सकता है।

नृत्य दो प्रकार के होते हैं- **शास्त्रीय नृत्य और लोक नृत्य**। अगर हम शास्त्रीय नृत्य पर दृष्टिपात करते हैं तो उनकी संख्या आधा दर्जन से अधिक है, किंतु इनका मौलिक आधार एक है और वह है भरत का नाट्यशास्त्र (ईसा की आरिम्भिक शताब्दियाँ)। उसी प्रकार, इन नृत्यों में कथायें भी समान पृष्ठभूमि से ली गई हैं और वे हैं रामायण, महाभारत, कुरान, गीत गोविन्द आदि। इसलिए कुछ ऊपरी स्तर की विविधता के बावजूद भी भारतीय संस्कृति की एकता की बात की जाती है।

प्रश्न- आरम्भिक भारतीय शिलालेखों में अंकित 'ताण्डव' नृत्य की विवेचना कीजिए। (100 शब्द, UPSC-2013)

उत्तर- 'तांडव' नृत्य सृजन एवं विध्वंश की ब्रह्माण्डीय व्यवस्था तथा जीवन एवं मृत्यु की गति को प्रतिबिम्बित करता है। परंपरा के अनुसार भारत के प्रथम नर्तक नटराज शिव हैं। उनसे नृत्य की दो आरंभिक शैलियाँ विकसित हुईं- तांडव एवं लास्य। तांडव नृत्य के विषय में सूचना हमें पौराणिक कथाओं के साथ-साथ प्राचीन शिलालेखों एवं मंदिरों में स्थापित मूर्तियों से मिलती है।

'तांडव' नृत्य में शिव का आक्रोश व्यक्त होता है। चूँकि यह आक्रोश एवं संहार का नृत्य है, अत: नृत्य को संपन्न करते हुए शिव के दाएँ हाथ में डमरू तथा बाएँ हाथ में अग्नि होती है। नृत्य के मध्य उनका तृतीय नेत्र भी खुल जाता है। बताया जाता है कि इसी अवस्था में उन्होंने कामदेव को भस्म कर दिया था। वर्तमान में कत्थक शास्त्रीय नृत्य पर हमें शिव के तांडव का प्रभाव दिखता है।

■ भरतनाट्यम

भरतनाट्यम, तमिलनाडु का नृत्य नाट्य है, जो इस प्रदेश के तंजौर तथा तिरूनेलवेली जिलों में शताब्दियों से प्रचलित रहा है। इस नृत्य के हाव-भाव एवं मुद्राएं दक्षिण भारत की कांस्य मूर्तियों से मिलती-जुलती हैं। यह नृत्य आरंभ में देवदासियों के द्वारा मंदिरों में किया जाता था। इसलिए भरतनाट्यम को **देवदासी अट्टम** भी कहा जाता है। यह धार्मिक नृत्य है जिसकी कथा प्राय: कृष्ण लीला, रामायण तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों से ली जाती है। जैसा कि नाम से ही विदित होता है इसकी शास्त्रीय शैली तथा शब्दावली भरत मुनि के नाट्यशास्त्र से ली गयी है। इसके तहत संगीत का संचालन नृत्यांगना के गुरू के द्वारा किया जाता है, किंतु अब यह नृत्य पुरूष के द्वारा भी किया जाने लगा है। पिछले 40 वर्षों में भरतनाट्यम को विश्वभर में प्रसिद्धि मिली है। इसके मुख्य कलाकारों में श्रीमती बालसरस्वती, रूक्मणी देवी, यामिनी कृष्णमूर्ति, रामगोपाल, वैजयन्तिमाला तथा सोनल मानसिंह हैं।

■ कथकली

कथकली केरल प्रदेश के मालाबार क्षेत्र का नृत्य है। कथकली का अर्थ है कहानी का प्रदर्शन। कथकली को वर्तमान रूप देने का श्रेय त्रावणकोर के महाराज वीर केरल वर्मा को है। उन्होंने 17वीं सदी में अनेक रचनाएं लोकभाषा मलयालम में लिखीं और यह नृत्य-नाट्य उन्हीं रचनाओं पर आधारित है। इस नृत्य की परंपरा लगभग 2000 वर्ष पुरानी है। कथकली की विषयवस्तु रामायण, महाभारत तथा शैव साहित्य की कथाओं से ली जाती है।

यह नृत्य खुले में किया जाता है तथा सारी रात चलता है। प्रदर्शन के दौरान कथावचक, कथा कहते हैं जिसका मुख्य अभिनय नर्तक केवल मुद्राओं द्वारा करते हैं। कथकली में नर्तक चुप रहता है क्योंकि उसके लिए बोलना या गाना वर्जित है। पारम्परिक रूप में कथकली केवल पुरूषों एवं नवयुवकों के द्वारा किया जाता है, जो स्त्रियों की भूमिका निभाते हैं। इस नृत्य में लड़कियों और स्त्रियों को भाग लेने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह नृत्य कठिन है। प्रत्येक कथकली नर्तक को तांडव तथा लास्य शैली में निपुणता होनी चाहिए। फिर अद्भुत रूप सज्जा एवं विचित्र वेशभूषा इस नृत्य की प्रमुख विशेषता है। मुख का अलंकरण इस नृत्य की मुख्य विशेषता है। मुख पर लाल, हरे, काले या पीले रंग का लेप किया जाता है एवं आँखों के चारों ओर सफेद रंग की रेखाएं खींची जाती हैं। वर्तमान युग में कथकली के सबसे प्रसिद्ध एवं महान कलाकार कुंजु कुरूप हैं।

■ कत्थक

कत्थक, उत्तर भारत का मुख्य शास्त्रीय नृत्य है, जिसका विकास भारतीय संस्कृति पर मुगलों के प्रभाव से हुआ। इस शास्त्रीय नृत्य शैली को मुख्य प्रेरणा मथुरा और वृंदावन के मंदिरो में होने वाली पारंपरिक कृष्ण और राधा की लीलाओं से प्राप्त हुई। आगे फिर अवध के नवाब के दरबार में इस नृत्य का विकास हुआ।

जैसाकि नाम से प्रसिद्ध है- 'कथा कहे सो कत्थक कहलाए।' कत्थक नृत्य का आरंभ भागवत पुराण की कथाओं से हुआ। यह नृत्य प्रायः राधा-कृष्ण के प्रेम पर आधारित है। इसलिए इसे 'नटवरी' कहते हैं। लास्य एवं तांडव दोनों भाव होने के कारण यह नृत्य स्त्रियों एवं पुरूषों दोनों में लोकप्रिय हैं। इस नृत्य में पुरूष और स्त्री दोनों भाग लेते हैं, इसलिए इसका जनजीवन से निकट संबंध रहा है। कत्थक नृत्य की वेशभूषा पर मुगलों का प्रभाव स्पष्ट दिखायी देता है। वर्तमान में कत्थक के तीन घराने हैं- लखनऊ घराना, जयपुर घराना तथा बनारस घराना। लखनऊ घराने के अच्छन जी महाराज, शम्भू महाराज तथा लच्छू महाराज अभिनय के सम्राट माने जाते हैं, किंतु वर्तमान में बिरजू महाराज कत्थक नृत्य के महानतम कलाकार रहे हैं, जिनका 17 जनवरी, 2022 को निधन हो गया।

■ मणिपुरी

मणिपुरी देश के उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र में स्थित मणिपुर राज्य का एक संवेदनशील नृत्य है। इसका विकास लगभग 2500 वर्ष पूर्व हुआ तथा यह भरत के नाट्यशास्त्र पर आधारित है। इस नृत्य की कथावस्तु सामान्यतः राधा-कृष्ण एवं गोपियों के जीवन से ली गयी है। आगे इस पर शैव तथा वैष्णव विचारधाराओं का भी प्रभाव देखा गया। इस नृत्य के भी दो पक्ष हैं- लास्य तथा तांडव। नृत्य में जयदेव, चैतन्य तथा विद्यापति की रचनाएं भी गायी जाती हैं। रासलीला को मणिपुरी की आत्मा कहते हैं। मणिपुरी नृत्य की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसे एकल, युगल तथा समूह, सभी प्रकार से किया जा सकता है। मणिपुरी नर्तकों की वेशभूषा भी विचित्र है। वेशभूषा में नृत्यांगना लम्बा-चमकीला घाघरा पहनती है जिसके फैलाव के लिए नीचे गत्ता लगा होता है। फिर उस पर गोल-गोल शीशे के टुकड़े लगे होते हैं। इस नृत्य शैली को प्रतिष्ठित करने तथा लोकप्रिय बनाने का श्रेय महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर को है। इसे विश्व प्रसिद्ध बनाने में श्री उदयशंकर का भी बहुत बड़ा योगदान रहा है। वर्तमान कलाकरों में नैनाजवेरी तथा उसकी बहनें मणिपुरी नृत्य की महान कलाकार मानी जाती हैं।

■ ओडिसी

ओडिसी नृत्य, उड़ीसा का 2000 वर्ष पुराना नृत्य है तथा यह भी भरत के नाट्यशास्त्र पर आधारित है। प्रारंभ में इसका विकास मंदिरों में हुआ, परंतु बाद में यह नृत्य दरबारों में किया जाने लगा। यह भुवनेश्वर, कोणार्क तथा पुरी के मंदिरों में प्रचलित रहा है तथा इनकी दीवारों पर भी यह नृत्य अंकित है। यह नृत्य मूलतः भरतनाट्यम से ही जुड़ा हुआ है। संजुक्ता पाणिग्रही, सोनल मानसिंह, माधुरी मुद्गल इस नृत्य शैली के प्रसिद्ध कलाकार हैं।

■ कुचिपुड़ी

यह नृत्य-नाट्य आंध्रप्रदेश के कुचिपुड़ी गाँव का है जिसकी विषय-वस्तु रामायण, महाभारत आदि महाकाव्यों से ली जाती है। इसका आरंभ सिद्धयेन्द्र योगी ने किया। उन्होंने ही इस कला का सर्वप्रथम प्रशिक्षण कुचिपुड़ी ब्राह्मण बालकों को दिया। इस नृत्य के कार्यक्रम का आरंभ पूजा अनुष्ठान से किया जाता है।

■ अन्य शास्त्रीय शैलियाँ

इनमें भगवत मेला, मोहिनीअट्टम तथा कुरुवंकी प्रसिद्ध है। भगवत मेला तमिलनाडु प्रदेश के मेल्लाट्टूर गाँव में हर वर्ष नरसिंह जयंती के अवसर पर मनाया जाता है।

मोहिनीअट्टम हिंदू पौराणिक कथाओं पर आधारित है जिसमें मोहिनी, शिव को आकर्षित करने के लिए मोहिनी विमोहक की भूमिका निभाती है। मोहिनीअट्टम, भरतनाट्यम तथा कथकली का मिश्रण है जिसमें कर्नाटक संगीत के साथ-साथ मलयालम गीतों का प्रयोग होता है। इस नृत्य में स्वर्गीय चिन्नामु अम्मा तथा कल्याणी कुट्टी अम्मा ने काफी प्रसिद्धि अर्जित की है। उसी प्रकार, **कृष्णा अट्टम** केरल प्रदेश का एक सुंदर नृत्य है। कुरूवंकी तमिलनाडु की प्रचलित लयमायी नृत्य नाटिका है जिसमें 4 से 8 स्त्रियाँ भाग लेती हैं। यह नृत्य भारतीय नृत्य की लोक तथा शास्त्रीय शैलियों का मिश्रण है।

■ असम का सत्रीया नृत्य

असमिया भाषा में सत्रस, मठ या विहार को कहते हैं। पारंपरिक रूप में यह नृत्य मठों और विहारों में किया जाता था। इस नृत्य की रचना असम के महान वैष्णव संत शंकर देव ने 15वीं शताब्दी में की। लगभग 500 वर्षों तक सत्रीया नृत्य मठों तथा विहारों की सीमाओं में बंद था, परंतु हाल ही में सत्रीया नृत्य भारतीय शास्त्रीय नृत्य के रूप में स्वीकार किया गया है और यह नृत्य मंच पर प्रस्तुत किया जाने लगा है।

■ यक्षगान

कर्नाटक में प्रचलित यह मूलतः ग्रामीण प्रकृति का नृत्य है, जो नृत्य और नाट्य का मिश्रण है। इसकी आत्मा 'गान' अर्थात् संगीत है। लगभग 400 वर्षों से प्रचलित इस नृत्य के विषय हिन्दू महाकालों से संबंधित होते हैं। इसकी भाषा कन्नड़ है, परन्तु वेशभूषा कथकली के समान होती है। इसमें भी विदूषक तथा सूत्रधार मुख्य भूमिका निभाते हैं।

संगीत कला

■ प्राचीन काल

भारत में संगीत के विकास का एक लंबा इतिहास रहा है। सर्वप्रथम वैदिक काल में एक गंधर्व वेद की चर्चा मिलती है, जिसमें संगीत एवं नृत्य का वर्णन है। उससे पूर्व सामवेद को भी संगीत पर एक महत्वपूर्ण ग्रंथ माना गया है। फिर आगे ईसा की आरंभिक शताब्दियों में भरत के द्वारा नाट्यशास्त्र लिखा गया। यह संगीत, नृत्य और नाट्य तीनों कलाओं पर प्रकाश डालता है।

प्राचीन काल के भारतीय शासकों में समुद्रगुप्त के विषय में यह बताया जाता है कि उसे संगीत में विशेष रुचि थी, क्योंकि उसके एक सिक्के पर उसे वीणा बजाते हुए दिखाया गया है। आगे एक परमार शासक भोज ने संगीत को विशेष संरक्षण दिया। उसी प्रकार, पूर्व मध्यकाल में कुछ अन्य राजपूत शासकों के द्वारा भी संगीत को प्रोत्साहन दिया गया था। इसके परिणामस्वरूप भारत में शास्त्रीय संगीत का विकास हुआ। भारतीय संगीत की उत्पत्ति ब्रह्मा से बताई जाती है तथा महादेव ने भारतीय संगीत को स्थायित्व दिया। भारतीय शास्त्रीय संगीत में 6 राग तथा 30 रागनियों का जिक्र मिलता है। ये 6 राग इस प्रकार हैं- भैरवी, हिंडोला, मेघ, श्रीराग, दीपक, मालकोश।

भारतीय संगीत परंपरा क्रमबद्ध रूप में विकसित होती रही। भारत में लगभग तीन महत्वपूर्ण विद्वानों के द्वारा संगीत पर ऐसे ग्रंथ लिखे गए, जिन्हें 'संगीत रत्नाकर' के नाम से जाना गया। ये विद्वान थे- भोज परमार, चालुक्य शासक सोमेश्वर तथा यादव दरबार में सारंगदेव।

दक्षिण में अलवार और नयनार संतों ने अपने ढंग से संगीत को प्रोत्साहन दिया। इन्होंने ईश्वर के साथ अपने भावनात्मक लगाव दर्शाए तथा उन्हें अपने गीतों के माध्यम से व्यक्त किया। आगे इन संतों की वाणी को आधार बनाते हुए 15वीं सदी में दक्षिण भारत के एक महत्वपूर्ण संत ने कर्नाटक संगीत को औपचारिक रूप में स्थापित किया।

■■■

KHAN GLOBAL STUDIES
Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR